Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LV (55), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन के नये स्वरूपो का समाजशास्त्रीय अध्ययन (परिवार, विवाह, जाति के विशेष संदर्भ में)

डॉ. पूजा तिवारी*

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला –छिंदवाडा (म.प्र.)भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र समकालीन भारतीय समाज में बुनियादी सामाजिक संस्थाओं जैसे परिवार ,विवाह और जाति में परिलक्षित परिवर्तनों का विश्लेषण करता हैं ,इन सभी संस्थाओं में गुणात्मक और सरंचनात्मक परिवर्तन दिखाई देते हैं जिसके पीछे अनेक कारण उत्तरदायी होतें हैं भूमंडलीकरण, उदारीकरण, तकनीकीकरण, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता आदि के बढ़ते प्रभाव ने पारम्परिक सामाजिक सरंचनाओं को गहराई से प्रभावित किया हैं।एक और जहाँ संस्थाएं अपने पुराने स्वरुप को त्याग कर आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के सांचे में ढल रही हैं वही दूसरी ओर परम्परा और आधुनिकता का एक जटिल अन्तर्सम्बन्ध भी देखने को मिलता हैं।

शब्द कुंजी – सामजिक संस्था, परिवर्तन, परिवार, विवाह, जाति, आधुनिकता, वैश्वीकरण।

प्रस्तावना – समाजशास्त्र में सामाजिक सामजिक संस्था मानव समाज का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और केन्द्रीय स्तम्भ हैं, संस्थाएं वे स्थापित नियम, मूल्य, मानक और कार्यप्रणालियाँ हैं जिनके माध्यम से समाज अपने सदस्यों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करता हैं और उनके व्यवहार को नियंत्रित एवं निर्देशित करता हैं। आज समाज परम्परिक रूप से आधुनिक समाज की तरफ बढ़ रहा हैं और इस संक्रमण की प्रक्रिया के कई आयाम हैं जैसे आर्थिक सरंचना में बदलाव ,कृषि से औद्योगिक और उत्तर औद्योगिक अर्थव्यवस्था, सामजिक स्थिति का आधार आरोपित से अर्जित, प्राथमिक से द्वितीयक सामाजिक सबंध, मूल्य और चेतना में पवित्रता से तर्कसंगत विचार, सत्ता और अधिकार के आधुनिक स्रोत आदि है जिसे टानिस, दुर्खिम, वेबर समाजशास्त्रीय विचारको ने अपने तरीके से बताया हैं।

उद्देश्य :

1. परिवार ,विवाह और जाति संस्थाओं में हो रहे परिवर्तनों के नये स्वरुप की पहचान करना।
2. परम्परा और आधुनिकता के बीच उत्पन्न होने वाले संघर्षो और विराधाभासों का विश्लेषण करने का प्रयास करना।

शोध प्राविधि –यह शोध पत्र दुतियक स्रोतों पर आधारित विशलेषणात्मक और गुणात्मक दृष्टिकोण एवम समाजशास्त्रीय साहित्यों ,शोध आलेखों पर आधारित हैं।

सामजिक संस्थाओं में नये परिवर्तन एवम नवीन प्रवृतिया :

1. परिवार संस्था
2. विवाह संस्था
3. जाति संस्था

1. परिवार – किग्सले डेविस ने परिवार को सामान रक्त वाले व्यक्तियों का समूह कहा हैं।

परिवार की मुख्य विशेषताओं में मुख्य रूप से सार्वभौमिकता , भावनात्मक आधार रचनात्मक प्रभाव ,छोटा आकर, सामाजिक सरंचना में केन्द्रीय स्थिति ,सदस्यों का असीमित उत्तरदायित्व, सामाजिक नियंत्रण आदि सम्मिलित हैं।परिवार कई प्रकार के होते हैं जैसे एकल परिवार ,संयुक्त परिवार, नव स्थानीय परिवार ,पितृसतात्मक परिवार, पितृ वंशीय परिवार, मात्रवंशीय परिवार, मात्रसतात्मक परिवार, एक विवाही परिवार ,बहु विवाही परिवार बहुपति, बहु पत्नी विवाही परिवार, ग्रामीण और नगरीय परिवार आदि।

परिवार का महत्व – परिवार समाजीकरण का साधन हैं ,परिवार में आर्थिक कार्य ,धार्मिक कार्य ,सांस्कृतिक कार्य, मनोरंजन आदि होतें हैं राबर्ट बीरस्टेड ने परिवार के कार्यो को व्यक्ति हेतु कार्य और समाज हेतु कार्य कुल दो भागो में बांटा हैं।

परिवार में उभरते नये प्रतिमान और परिवर्तन :

1. एकल अभिभावक परिवार – वर्तमान में भारतीय समाज में एकल अभिभावक परिवार परिलक्षित होतें हैं जहाँ पर माता या पिता अपने बच्चों को अकेले परवरिश करतें हैं ,इसके पीछे कई कारण हैं जिनमे तलाक ,आपसी सहमति से अलगाव, पति या पत्नी की असमय मृत्यु और बिना विवाह के बच्चों को पालना आर्थिक मजबूती आदि हैं।

2. डिंक्स (DINKS) की अवधारणा – आजकल दंपति में डबल इन्कम, नो किड्स की भावना भरी हुई हैं अर्थात कमाई तो दो गुनी किन्तु संतान नही पैदा करना हैं।

3. बालहीनता का विकल्प – महानगरों और उच्च शिक्षित वर्ग में कई दम्पति सामाजिक दबाव से हट कर अपने करियर को प्राथमिकता देते हैं और व्यक्तिगत आजादी के कारण बालहीनता का विकल्प का अचयन करतें हैं।

4. लैंगिक भूमिकाओं में परिवर्तन – आजकल परिवार में कामकाजी महिलाओं की संख्या बढ़ रही हैं जिस कारण से पुरुष भी होम मेकर की

भूमिका में दिखतें हैं

5. नाभकीय और संशोधित विस्तारित परिवार का चलन – आजकल पारम्परिक संयूक्त परिवारों का विघटन होकर उनके स्थान पर अब नाभकीय परिवार आम हो गयें हैं जिसमे पति –पत्नी और उनके अविवाहित संतान ही रहतें हैं। इसके साथ ही आसन परिवहन वीडियो काल और भौगोलिक आसान पहुँच के कारण संशोधित विस्तृत परिवार भी उभरा हैं जहाँ भौतिक रूप से लोग अलग रहतें हैं किन्तु भावनात्मक और आर्थिक सहयोग लगातार बना रहता हैं।

6. एम्प्टी नेस्ट सिंड्रोम की प्रवृति और वैकल्पिक पारिवारिक सरंचनाएं – आजकल बुजुर्ग दम्पति अकेले रहने याने एम्प्टी नेस्ट का चलन देखने को मिल रहा हैं जिसके पीछे का मुख्य कारण कम संतान और संतानों का बाहर महानगरों में नौकरी करना हैं इसलिए आजकल ओल्ड ऐज होम या सामुदायिक लिविंग भी बढ़ रहा हैं।इसके साथ ही समाज में भी वैकल्पिक पारिवारिक व्यवस्था भी दिखाई दे रही हैं।

7. बिना विवाह संतान उत्पति वाले परिवार – आजकल पुरुष हो या स्त्री बिना विवाह किये सोरोगेसी से संतान पैदा करवाते हैं और अकेले उनका पालन पोषण करतें हैं अर्थात संतान तो चाहिए होती है किन्तु सन्तान की माता या पिता नही चाहिए होता हैं।

इस प्रकार वर्तमान में पारम्परिक परिवार की सरंचना में नये प्रतिमान परिलक्षित हो रहें हैं।

परिवार अब केवल खून के रिश्तें या एक छत के नीचे रहने तक सिमित नही हैं बल्कि यह आपसी सहमति, भावनात्मक तालमेल और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं के आधार पर आकार लेने वाली एक लचीली संस्था बनता जा रहा हैं।

विवाह – विवाह एक सामाजिक –सांस्कृतिक संस्था हैं जो एक स्त्री –पुरुष को कुछ विशेष नियमो के अंतर्गत यौन –संतुष्टि के अवसर प्रदान करती हैं, समाजशास्त्री बोगार्डस के अनुसार विवाह स्त्री अवम पुरुष के पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की संस्था हैं।

विवाह की मुख्य विशेषताओं में मुख्य रूप से सामजिक संस्था, सामाजिक नियम , कानून और प्रथा ,यौन सम्बन्ध का अधिकार, सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारण और संतान उत्पति आदि हैं। मुरडाक ने विवाह के चार उद्देश्य बताये हैं जिसमे यौनिक इच्छाओं की पूर्ती, परिवार की स्थपना, आर्थिक सहयोग और बच्चो का पालन –पोषण करना आदि शामिल हैं। विवाह के कई प्रकार होतें हैं जिनमे एक विवाह,बहु –पत्नी विवाह ,बहुपति विवाह ,देवर विवाह ,गांधर्व विवाह आदि मुख्य हैं।

डॉ. राजबली पाण्डेय के अनुसार हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्था हैं जिसमें धार्मिक कर्तव्यों की पूर्ति, पुत्र प्राप्ति, रति, सामजिक और नैतिक जीवन का विकास आदि शामिल हैं।

हिन्दू विवाह में अन्तर्विवाह, बहिर्विवाह, अनुलोम विवाह, प्रतिलोम विवाह, अधिमान्य विवाह जिसमे ममेरे और फुफेरे भाई –बहन का विवाह , मौसेरे –चचेरे भाई –बहिन का विवाह , साली विवाह और भाभी विवाह शामिल हैं।

विवाह संस्था में उभरते नये प्रतिमान –

1. संस्कार से सहचर्य की ओर परिवर्तन – पारम्परिक रूप से विवाह को एक अटूट संस्कार माना जाता था ,वर्तमान में विवाह को समान पार्टनरशिप और मानसिक मेल –जोल और आपसी सम्मान को महत्व दिया जाता है।

2. प्रेम विवाह ,अंतर –जातीय विवाह और अंतर –धार्मिक विवाह में बढ़ोतरी – आजकल जीवन –साथी के चयन में व्यक्तिगत पसंद और प्रेम को भी महत्व मिल रहा हैं। आजकल सह –शिक्षा ,शहरी संस्कृति के प्रभाव से प्रेम विवाह ,अंतर जाति विवाह और अंतर धार्मिक विवाह बढ़ रहें हैं।

3. लिव –इन रिलेशनशिप – विवाह के बंधन में बंधे बिना ही पति पत्नी की तरह एक घर में रहने का चलन आजकल देखने को मिल रहा हैं जिसे लिव इन रिलेशनशिप कहतें हैं इसे कानूनी मान्यता प्राप्त हैं।

4. विलम्ब विवाह – आजकल विवाह करने की औसत आयु काफी बढ़ गयी हैं जिसके पीछे उच्च शिक्षा ,आत्मनिर्भरता ,करियर आदि हैं।

5. विवाह विच्छेद की बढती स्वीकार्यता – अब समाज में तलाक या विवाह विच्छेद को लांछन या दोष की तरह नही देखा जाता हैं बल्कि विचार नही मिलने या कलह के कारण अदालत से या आपसी सहमति से दम्पत्ति तलाक आसानी से ले लेते हैं

6. लेट –लाइफ मैरिज का प्रचलन – आजकल लोग जीवन के उत्तरार्ध में अकेलेपन से बचने के लिए बुढ़ापें में शादी कर रहें हैं जिसमे संवेदनशीलता ट्रेंड भी दिखाई देता हैं।

7. डिजिटल मैट्रीमोनी और एल्गोरिदम आधारित मैचमेकिंग – आजकल विवाह की बात करने वाले पारम्परिक पंडित ,बिचोलियें या रिश्तेदार की भूमिका डेटिंग एप और मैट्रीमोनी वेबसाइट ने ले ली हैं। आज युवा खुद ऑनलाइन प्लेटफार्म पर जाकर अपने पसंद के फिल्टर जैसे करियर, लाइफस्टाइल, व्यक्तिगत रूचि के आधार पर अपने लियें जीवन साथी तलाश लेते हैं।

8. सेम सेक्स मैरिज – महानगरो के साथ शहरो में भी सेम सेक्स मैरिज का चलन तेजी से बढ़ रहा हैं।

9. बेमेल विवाह का चलन – आजकल पति से पत्नी बीस साल छोटी या पत्नी से पति दस –पन्द्रह साल कम आयु अर्थात बेमेल विवाह भी चलन में हैं ,जिसके पीछे मुख्य कारण आधुनिकता, भौतिकता, धन दौलत, नैतिकता का पतन और स्वछन्द विचार आदि हैं।

इस प्रकार विवाह की संस्था आज परम्परा और आधुनिकता के दोहरे प्रभाव से गुजर रही हैं जहाँ सामाजिक नियंत्रण की तुलना में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और भावनात्मक संतोष को अधिक महत्व मिलने लगा हैं।

जाति संस्था में नये प्रतिमान – जाति भारतीय समाज का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और केन्द्रीय अध्ययन विषय हैं मजूमदार और मदान के अनुसार 'जाति एक बंद वर्ग हैं' अर्थात जाती जन्म पर आधारित हैं जो अपरिवर्तनशील हैं।

जाति की मुख्य विशेषताओं में जन्मजात सदस्यता, अंतर्विवाह, खानपान और सामाजिक प्रतिबन्ध, पारम्परिक व्यवसाय, सांस्कृतिक और सामाजिक श्रेणिया, पवित्रता और अपवित्रता का विचार आदि शामिल हैं।

जाति की उत्पति के सबंध में कई सिद्धांत प्रचलित हैं जिनमे धार्मिक सिद्धांत, रिजले द्वारा प्रतिपादित नस्ल या प्रजाति सिद्धांत, घूरिये और नेसफील्ड का व्यावासिक सिद्धांत एवम राजनीतिक सिद्धांत आदि प्रमुख हैं जो अलग अलग तरह से जाति की उत्पति या जाती का प्रादुर्भाव के विषय में जानकारी देते हैं।

भारतीय समाज में जाति का प्रभाव जीवन के लगभग हर क्षेत्र में देखा जा सकता हैं।जाति के लाभ और हानि दोनों पक्ष परिलक्षित होते हैं। एक

ओर जतिमनुश्य को सामाजिक पहचान और सुरक्षा देती हैं ,साथ ही संस्कृति की वाहक और मूल्यों की सरंक्षक होती है तो दूसरी ओर जाति व्यवस्था के कारण समाज में भेदभाव, छुआछूत की भावना, ऊँच –नीच की भावना और सामजिक गतिशीलता में रुकावट और अन्य समस्याएं भी उत्पन्न हो जाती हैं जो समाज और राष्ट्र का विकास के मार्ग में बाधक होती हैं।

जाति व्यवस्था में उभरते नये प्रतिमान – समकालीन भारतीय समाज में जाति व्यवस्था अपने पारंपरिक स्वरुप से निकलकर एक नये दौर में प्रवेश कर रही हैं जो निम्नानुसार हैं

1. जाति का विमुद्रीकरण और पुनर्संरचना

(अ) पारम्परिक कार्यों से अलगाव – प्राचीन रूप से जाति जन्म से जुड़े पारम्परिक व्यवासय पर जोर देती हैं किन्तु आजकल व्यक्ति किसी भी व्यवसाय या नौकरी करने के लिए स्वतंत्र हैं जिसके पीछे आधुनिक शिक्षा ,कानूनी प्रावधान आदि कारण हैं।

(ब) अस्पृश्यता और शुद्धता – आजकल अपवित्रता के पैमानों में कमी आई हैं।सार्वजनिक स्थानों ,होटलों ,परिवहन और कार्यस्थलों पर पारम्परिक रूप से मान्य खान –पान और छुआछूत के कठोर नियम काफी हद तक शिथिल हो गयें हैं।

2. वर्ग का जाति पर हावी होना – महानगरो ,कार्पोरेट सेक्टर और आधुनिक कार्यस्थलों पर जातिगत पदानुक्रम की जगह अब आर्थिक वर्ग , उपभोग की शैली और पेशेवर दक्षता ने ले ली है। शहरी मध्यम वर्ग के बीच मेलजोल में अक्सर जातिगत पृष्ठ भूमि पीछे छूट जाती हैं और एक समान जीवन शैली या समान आर्थिकता अधिक महत्वपूर्ण हो जाती हैं।

3. लोकतंत्र ,पहचान की राजनीति और जाति का नया राजनीतिकरण – एक ओर सामाजिक स्तर पर जाति कमजोर हो रही हैं वही दूसरी ओर लोकतान्त्रिक राजनीति, चुनावों और आरक्षण के कारण जातिगत अस्मिता और मजबूत हुई हैं।राजनैतिक दलों द्वारा अपने वोट बैंक को साधने के लिए जातिगत गठजोड़ बनायें जातें हैं ,जिससे जाती केवल सामाजिक पहचान न रहकर राजनैतिक सौदेबाजी और अधिकारों को प्राप्त करने का एक प्रभावी साधन बन गयी हैं।

4. डिजिटल स्पेस और मेट्रिमोनी में जाति का स्थान – जीवन साथी, शादी.कॉम जैसे मेट्रिमोनी वेबसाइट और ऐप्स में जाति और गोत्र के फिल्टर आ गयें हैं जिससे सभी लोग यथोचित वर –वधु ढूंढ सकतें हैं।

5. अंतर्जातीय विवाह और सामाजिक स्वीकार्यता – आजकल अंतर्जातीय विवाह ,अंतर्धार्मिक विवाह का चलन बढ़ गया हैं किन्तु कई खाप पंचायतो के विरोध अपनी जगह पर कायम हैं किन्तु दूसरी ओर उच्च शिक्षा , आधुनिकता आदि के कारण ऐसे विवाहों को सामाजिक स्वीकार्यता भी प्राप्त हो रही हैं।

6. सोशल मीडिया और डिजिटल जातिवाद – आधुनिक तकनीक और सोशल मीडिया प्लेटफार्म जैसे फेसबुक , इनस्टाग्राम ,एक्स आदि पर जातिसूचक शब्द और उपजातियों के समूह के माध्यम से डिजिटल जातिवाद का एक नया रूप उभरा हैं जहाँ युवा अपनी जाति की पहचान को ऑनलाइन गर्व के साथ प्रदर्शित करतें हैं। इस प्रकार से भारतीय समाज में जाति की परिभाषा में बदलाव इंगित हो रहे हैं।

अंत में कहा जा सकता है कि भारतीय सामाजिक संस्थाओं परिवार, विवाह और जाति में उबरते हुए नये प्रतिमान यह दर्शाते हैं कि समाज सामूहिकता और कठोर सामाजिक नियन्त्रण से निकल कर व्यक्तिगत अधिकारों और तार्किकता की ओर बढ़ रहा हैं ,जहाँ आधुनिकता के प्रकाश में भी परम्परा की जड़ें किसी न किसी रूप में अपनी प्रासंगिकता बनाये रखने का प्रयास कर रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, डॉ. गोपाल कृष्ण, नातेदारी विबाह एवम् परिवार, एस बी पी डी पब्लिशिंग हाउस, आगरा (उ.प्र.)
2. बघेल, डॉ. डी.एस., भारतीय समाज एवम् संस्कृति, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (म.प्र.)

****